Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2025 E-Journal, Volume I, Issue XLIX, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतेन्दुयुगीन राज्योन्मुख राष्ट्रीयता

प्रियंका शर्मा *

* छात्रा, एम.ए. (उत्तरार्ध) (हिंदी) मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार (राज.) भारत

प्रस्तावना – भारतेन्दु युग को हिंदी साहित्य का नवजागरण काल कहा जाता है। इस युग में राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और सामाजिक सुधार की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। 'राज्योन्मुख राष्ट्रीयता' अर्थात उस राष्ट्रीय भावना का विकास जो तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्थितियों से जुड़ा हुआ था। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने अपने लेखन के माध्यम से उस समय की राजनैतिक विसंगतियों को उजागर किया और जनमानस में राष्ट्रभक्ति की भावना को बल दिया।हिन्दी कविता के विकास क्रम में आधुनिक हिन्दी कविता ने नये सोपान निर्मित किए और कविता को युग के अनुरूप दिशा प्रदान की। आधुनिक हिन्दी कविता के प्रत्येक युग एक समान न होते हुए भी परस्पर एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं।आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना का एक नवीन रूप सामने आता हैतब उस समय भारतवर्ष अंग्रेजी शासन का गुलाम मानसिक रूप से हो चुका था। भारतीय इतिहास के सामाजिक–धार्मिक पुनर्जागरण के समानांतर आधुनिक काल हिन्दी साहित्य का नवजागरण का काल है। आधुनिक हिन्दी कविता की राष्ट्रीय चेतना के महत्त्व के बारे में शिवदान सिंह चौहान कहते हैं– 'आधुनिक हिन्दी कविता राष्ट्रीय जागरण के क्रोड़ में विकसित हुई है।'[1]

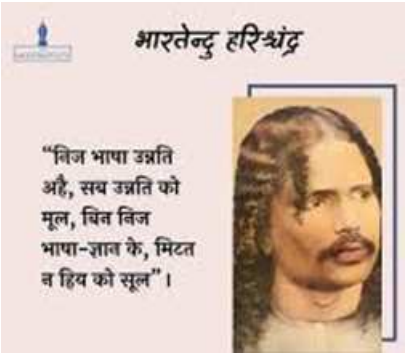

परिचय– भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850–1885) को हिंदी नवजागरण का अग्रदूत माना जाता है। वे न केवल कवि और नाटककार थे, बल्कि पत्रकार, सामाजिक चिंतक और राष्ट्रभक्त भी थे। उन्होंने साहित्य को समाज और राष्ट्र की सेवा का माध्यम बनाया। उनके युग में राष्ट्रीयता का स्वर तत्कालीन ब्रिटिश शासन की नीतियों के विरोध के रूप में उभरा।

राज्योन्मुख राष्ट्रीयता का अर्थ– राज्योन्मुख राष्ट्रीयता से आशय हैकृऐसी राष्ट्रीय चेतना जो शासन प्रणाली, राजकीय नीतियों और औपनिवेशिक सत्ता की आलोचना के माध्यम से विकसित होती है। यह चेतना सामाजिक सुधार, सांस्कृतिक पहचान और राजनीतिक स्वतंत्रता की ओर उन्मुख होती है।

आधुनिक काल में कविता के विकास काल को क्रमश: भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावादी युग, प्रगतिवादी, प्रयोगवाद, नयी कविता, साठोत्तरी अथवा समकालीन कविता के नाम से अभिव्यंजित किया गया है।आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीयता सन्दर्भ में सर्वप्रथम भारतेन्दु युग का नामआता है। जहाँ स्वयं भारतेन्दु ने राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत काव्य का सृजन किया। भारतेन्दु युग वस्तुत: राष्ट्रीय चेतना के विकास का एक महत्त्वपूर्ण युग है।

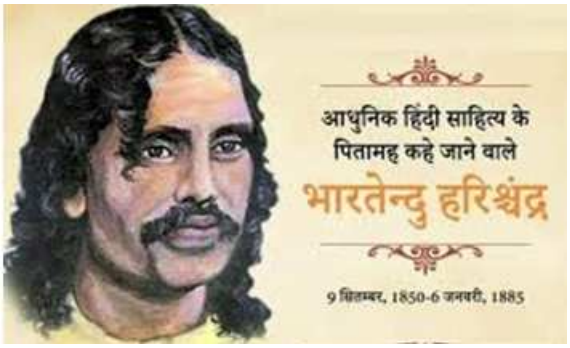

आधुनिकता के चिह्न अर्थात् भारतेन्दु युग, स्पष्ट हैं कि भारतेन्दु युगीन कविता पुनर्जागरण की कविता है। आधुनिक काल अर्थात् भारतेन्दु युग में राष्ट्रीयता को एक नया रूप मिला है। इस समय तक देश अंग्रेजी शासन की निर्दयता व कठोरता से पूरी तरह जकड़ चुका था। भारतेन्दुकालीन साहित्यकारों ने रीतिवादी सामन्ती मूल्यों को ध्वस्त किया और साहित्य में नवीन मूल्यों की स्थापना की।इस प्रकारहिन्दी कविता का आधुनिक काल वस्तुत: स्वाधीनता आन्दोलन के विकास का इतिहास है।

भारतवर्ष के देशी राजा–रजवाड़ों सहित जन–जन ने अपने पुरुषार्थ से 1857ई.के समय सम्पूर्ण देश में स्वतन्त्रता संग्राम के माध्यम से अंग्रेजी शासन को समाप्त करने का प्रयत्न किया गया था। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप राष्ट्रीयता का स्वर अधिक मुखर हुआ। इस युग के कवियों ने जन–जन के मन में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए काव्य की सर्जना की। स्वयं भारतेन्दु राष्ट्रीय चेतना के प्रबल समर्थकों में अग्रणी रहे और उन्होंने समाज सुधार के साथ–साथ अतीत का गौरवगान करते हुए भारतीय जनता में आत्मसम्मान व स्वाभिमान का भाव जगाया।

भारतेन्दु के कृतित्व में राज्योन्मुख राष्ट्रीयता:

पत्रकारिता के माध्यम से राष्ट्रचेतना: भारतेन्दु ने 'कविवचनसुधा', 'हरिश्चंद्र मैगजीन' जैसे पत्रों के माध्यम से ब्रिटिश शासन की नीतियों की आलोचना की। उनके संपादकीय लेखों में शिक्षा, स्वदेशी, और स्वराज की भावना प्रबल रूप से दिखाई देती है।

नाटकों में राजनीतिक चेतना: नाटक 'अंधेर नगरी' में उन्होंने भ्रष्ट शासन तंत्र और न्याय व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया। इसमें स्पष्ट रूप से तत्कालीन औपनिवेशिक शासन की विफलताओं का चित्रण है।

काव्य में राष्ट्रप्रेम: उनके काव्य में भारत की सांस्कृतिक गरिमा, गौरवपूर्ण अतीत और स्वतंत्रता की आकांक्षा झलकती है। उदाहरण स्वरूप–

'बिसरि गई सब बात, रहा अब तो भारत ही को प्यार'

यह पंक्ति राष्ट्रभक्ति का स्पष्ट उदाहरण है।

सांस्कृतिक चेतना: भारतेन्दु ने भारतीय भाषाओं, परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों को बढ़ावा देने पर बल दिया, जो औपनिवेशिक सांस्कृतिक प्रभुत्व के प्रतिरोध का हिस्सा था।

सुज्ञात हैं कि भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीय चेतना का प्रथम रूप राजभक्ति के माध्यम से प्रकट होता है। इस राजभक्ति के मूल में भारतीय जनता का ब्रिटिश शासन के प्रति आस्था भाव है। भारतेन्दु युगीन साहित्य में राजभक्ति और देशभक्ति परस्पर एक दूसरे से जुड़ी हुई थी। क्योंकि वह समय ही ऐसा था जिसमें राजभक्ति व देशभक्ति का एक साथ रहना आवश्यक था। हालांकि कम्पनी के शासन काल में भारतीय जनता को अनेकानेक कष्ट झेलने पड़े थे। किन्तु विक्टोरिया के शासन काल में उन्हें कुछ सुख शांति की आशा अवश्य दिखी। डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय अंग्रेजों के गुणगान का कारण बताते हुए लिखते हैं[2]– 'अंग्रेजी राज्य में भारतवासियों को मुसलमानी अत्याचार और दिन रात की कलह और अशांति से पहले पहल रक्षा मिली। इसीलिए उन्होंने मुसलमानी राज्य की अपेक्षा अंग्रेजी शासन कहीं श्रेयस्कर समझा।' स्वयं भारतेन्दु हरिशचन्द्र को भी राजभक्ति विरासत में मिली थी। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि[3] 'विक्टोरिया देश की मल्लिका हैं और उनके तथा उनके परिवार के प्रति (राजपरिवार) वफादारी और निष्ठा का भाव रखना हर देशवासी का कर्त्तव्य है।' भारतेन्दु ने ग्यारह वर्ष की आयु में प्रिंस एलवर्ट के सम्मान में एक कविता लिखी थी तथा महारानी विक्टोरिया के पति प्रिंस एलबर्ट की मृत्यु पर श्री अलवरत वर्णन (अन्तर्लिपिका) लिखकर महारानी विक्टोरिया के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए लिखते हैं –

'कह सितार के सार?सत्रु के किमि मन तेरे? काकी मार प्रहार सीम अरि हनै घनेरे?

को महारानी को पति परम सोभित स्वर्गहि ह्वै रहौ? अलवरत एक छत्तीस इन प्रश्नन को उत्तर कह्यो।'

1857 ई. में प्रिंस ऑफ वेल्स (सम्राट एडवर्ड VII) के भारत आगमन पर 'श्री राजकुमार शुभागमन वर्णन' कविता में भारतेन्दु अपनी राजभक्ति का परिचय देते हैं। यथा

'स्वागत स्वागत धन्य तुम भावी राजधिराज भई सुनाया भूमि यह परसि चरन तुव आज।।'

इसी तरह 1869 ई. में श्श्री राजकुमार सुस्वागत पत्रश नामक कविता की रचना की और उसमें उन्होंने राजकुमार से प्रार्थना की–

'विनवत जुग प्रफुलित जलज, करि कलि कैक समान भुजा भुजा की छांह मैं, देहु अभय पद दान।।'

साथ ही 'भारत भिक्षा' शीर्षक कविता में राजकुमार के आगमन से भारत भूमि के आनन्दमय होने का वर्णन भी करते हैं–

'अहो आज का सुनि परत भारत भूमि मंझार।
चहूं ओर आनन्द धुनि कहा होत बहु बार।।
ब्रिटिश सुशासित भूमि में आनन्द उमगे जात।
सबै कहत जय आज क्या यह नहिं जान्यो जात ।।'

वे महारानी व युवराज की जय जयकार करते हुए लिखते हैं–

'बजे बृटिश डंका सघन गहगह शब्द अपार।
जय रानी विक्टोरिया जै जुवराज कुमार।।'

यही नहीं भारतेन्दु ने अंग्रेजों और हिन्दुओं में एक जातीत्व की स्थापना करते हुए महारानी विक्टोरिया को राजराजेश्वरी तक की उपमा दे डाली। साथ ही 'मनुमुकुल' नामक कविता में अंग्रेजों को आर्य जाति का कहकर हिन्दुओं में एकता की कामना भी करते हैं–

'होई भारत धीश्वरी आरज स्वामिनि आज।
तुम हुदै आरज जाति कहं मिलयो धन यह राज।।'[4]

भारतेन्दुयुगीन कवियों में मुख्य कवि बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' भी इसी पद्धति का अनुकरण करते हुए ब्रिटिश शासन के आगमन पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

'धन्य ईसवीं सन अठारह सौं अट्ठा वन प्रथम नवम्बर दिवस सतासित भेद मिटावन।।'

यहाँ सतासित भेद का अन्त है। आगे की पंक्तियों में वे लिखते हैं कि हे महारानी तेरा शासन धन्य है जैसे बकरी और सिंह एक घाट का पानी पीते हैं, वैसी समानता तेरे इस शासन काल में भी है –

'धन्य तिहारो राज, अरी मेरी महारानी।
सिंह, अजा संग पियत जहां एकहि थल पानी।।'[5]

राजभक्ति में 'प्रेमघन' जी भारतेन्दु तथा उनके युगीन अन्य कवियों से भी एक कदम आगे निकल गये हैं। अम्बिकादत्ता व्यास भी 'जयति राजराजेश्वरी जय जय परमेश' पंक्तियों द्वारा रानी विक्टोरिया के सुशासन के प्रति आभार व्यक्त करते हैं।[6]

भारतेन्दु युगीन कवि पूर्णरूपेण देश भक्त थे और उनमें राष्ट्रीय चेतना का ज्वार भी उमड़ रहा था। उस युग के कवियों में राष्ट्रीयता का आदर्श ब्रिटिश राज्य को उखाड़ फेंकने की बजाय उनकी छत्रछाया में रहकर औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त करना था। यही कारण है कि उस काल में उग्रवादी विचारधारा का प्रवर्तन धीरे–धीरे हुआ। महारानी विक्टोरिया के शासन में मध्यमवर्गीय समाज में शान्ति और सुख की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी किन्तु परिणाम कुछ और ही रहा। कल्पना लोक में जीने वाले मध्यमवर्गीय लोगों को सुख–शान्ति की बजाय कठोर यथार्थ की पीड़ा की मार झेलनी पड़ी और समाज के इस वर्ग के सपने टूट गए। इस प्रकार जन जीवन में असन्तोष की लहर फैल गई और इसी असन्तोष के कारण जनता को अपनी परतन्त्रता और विपन्नता का आभास हुआ। इसी असन्तोष के कारण जनता में क्रान्तिकारी विचारधारा का उदय हुआ। भारतेन्दु अपनी रचना 'भारत दुर्दशा' में अतीत गान करते हुए उसके छठे अंक में लिखते हैं –

भारत के भुजबल जग रच्छित।
भारत विद्या लहि जग सिच्छित ।।
भारत तेज जगत विस्तारा भारत भय कांपत संसारा ।
जाके तनिकहिं भौंह हिलाए थर–थर कांपत नपृ डरपाए ।।
जाके जय की उज्ज्वल गाथा गावत सब महिं मंगल साथा।।

भारत के तेज, गौरव की सम्पूर्ण संसार में ख्याति है। भारत के तेज से यूरोप व अमेरिका सभी ईर्ष्या करते थे–

जिनके भय कंपित संसारा, जब जग जिनको तेज पसारा।
पुरुष अमरिका इहिहि सिहाहि, भारत भाग सरिस कोउ नहीं।।

भारत वर्ष पर ही सबसे पहले ईश्वर की कृपा हुई थी। इसीलिए उसने सबसे पहले इसे धन, धान्य व बल प्रदान किया, सभ्य बनाया। सर्वप्रथम विद्या का फल भी इसे ही मिला। रूप, रंग का रस भी सर्वप्रथम भारत को ही मिला है–

सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सबके पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो ।।
सबके पहिले जो रूप रंग रस भीनो। सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो।।[7]

क्रान्ति की भावना को जनमानस में जगाने के लिए भारतेन्दु ने भारतीय शूरवीरों का स्मरण करते हुए जनता का जगाने का प्रयास किया है –

धन धन भारत के सब छात्री जिनकी सुजल धुजा फहराय
मारि मारि के शत्रु दिये हैं, लाखन बेर भगाय।
महानन्द की फौज सुनत ही डरे सिकन्दर राय।
राजा चन्द्रगुप्त लै आये बेटी सिल्यूकस की जाय।
मारि बलूचिन विक्रम रहे शकारी पदवी पाय।
बापा कासिम तनय मुहम्मद जीत्यौ सिन्धु दियो उत्तरायै।[8]

प्रेमधन भी अपने स्वर्णिम अतीत का स्मरण करते हुए वर्तमान पर क्षोम प्रकट करते हैं–

नहि अब भारत वह रह्यो, नहिं यामैं वह तत्व।
हाथ विधाता ने हर्यो, कैसो याको सत्व ।।
नहि वह काशी रह गई, हती हेम मय जौन।
नहिं चौरासी कोस की, रही अयोध्या तौन।।[9]

राधाकृष्ण दास ने अपनी ष्विजयिनी विलापष कविता में भी भारतीय ऐतिहासिक महापुरुषों का यश गान करते हुए अपनी सांस्कृतिक विरासत का भाव पूर्ण व मर्मस्पर्शी गान करते हुए वर्तमान की चिन्ता की है–

कहाँ परिक्षित कह जनमजेय कहं विक्रम कहं भोज नन्दवंश कहं चन्द्रगुप्त कहँ हाय कहाँ वह ओज। हा कबहुँ वह दिन फिर हुवै हैं वह समृद्धि वह शोभा। कै अब तरसि तरसि मसूसि कै दिन जैहै सब छोभा ।[10]

डॉ. उर्मिला जैन ने लिखा है कि, 'वर्तमान अधोगति की भावना वेदना उत्पन्न करती हैं जो केवल असहायता की वेदना नहीं है, बल्कि क्षोभ भरी है। हिन्दी के कवि इस माध्यम से विदेशी शासन के प्रति अपना आक्रोश प्रकट करते हैं। वर्तमान की धूमिल पृष्ठभूमि पर अतीत का चमकता हुआ उज्ज्वल चित्र सहज ही प्रकट हो जाता है।'[11]

भारत दुर्दशा में भारत की दयनीय स्थिति (दशा) को देखकर भारतेन्दु के कंठ से निकला था–

रोवहु सब मिलि कै आवहु भारत भाई।
हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।[12]

भारतेन्दु से भारत की दुर्दशा सही नहीं गई। इसकी अनुभूति इतनी अधिक तीव्र थी कि उन्होंने देशवासियों को भी आमंत्रित किया। उन्हें सर्वत्र दुःख ही दुःख दिखाई दिया और उनमें गहरा असन्तोष पैदा हो गया और उन्होंने लिखा

अब जहें देखहुँ तहँ दुख ही दुख दिखाई।
हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।[13]

पराधीनता से बढ़कर कोई दुःख दूसरा नहीं है। इसी पीड़ा की अभिव्यक्ति करते हुए प्रेमधन ने पराधीनता को सबसे बड़ा दुःख माना है। इसी कारण प्रकारान्तर में उन्होने अंग्रेजी शासन के प्रति अपना असन्तोष प्रकट किया है–

जदपि जगत में बहुदुख दुसह महान।
पराधीनता के सम तदपि न आन।।[14]

देशवासियों की इस स्थिति को देखकर इन कवियों का हृदय पीड़ा से रो उठता है। भारतेन्दु युगीन कवियों ने जहां देश की दुर्दशा को नजदीक से देखा था वहीं जनता के कष्टों को भी अपनी वाणी दी थी। जिस देश में कभी सोना बरसता था उसी देश की जनता एक रोटी के लिए ललचाई निगाहों से ताकती नजर आती है। बालमुकुन्द गुप्त इसी पीड़ा का गान अपनी कविता जातीय गीत में करते हुए कहते हैं–

जिनके कारण सब कुछ पावैं जिसका बोया सब जन खायें।
हाय हायउनके बालक नित भूखों के मारे चिल्लायें ।।[15]

अंग्रेजों ने अपने खजाने और राजकोष में वृद्धि करने हेतु भारतीय जनता का अत्यधिक शोषण किया, फलतः राजस्व मांग, करों एवं बढ़ती मंहगाई के बोझ से दबी जनता की दीनावस्था का चित्रण करते हुए प्रतापनारायण मिश्र लिखते हैं–

तबहिं लख्यों जहं रह्यो एक दिन कंचन बरसत।
तहं चौथाई जन रूखो रौटिहुं को तरसत
जहां आमन की गुठली अरू बिरछन की छालै।
ज्वार चून महं मेलि लोग परिवारहिं पालै ।।
नोन तेल लकरी घासहु पर टिक्स लगे जहाँ।
चना चिरौंजी मोल मिले जहँ दीन प्रजा तहाँ।।[16]

उपर्युक्त पंक्तियों में ब्रिटिश सरकार द्वारा किए जाने वाले आर्थिक शोषण और भारतीय दासता का चित्रण भली भाँति स्पष्ट होता है। तत्कालीन समय में पड़ने वाले अकाल, महामारी और कर के बोझ से दबी हुई जनता की करुणाजनक स्थिति को भारतेन्दु ने भी अपनी वाणी दी है –

ताहु पै महंगी, काल और बीमारी
दिन दिन दूनों दुख देत ईस हा हारी।।[17]

पं. बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' ने देश के पतनोन्मुख समाज का वर्णन करते हुए चिन्ता व्यक्त करते हुए लिखते हैं –

भयो भूमि भारत में महा भयंकर भारत।
भये वीरवर सुभट एकहि संघ गारत ।।
भये विवुध नर नाह सवल चातुर गुन मंडित ।
बिगरो जनसमुदा बिनापथ दर्शक पंडित।
नये-नये न चले, नये झगरे नित बढ़े।
नये-नये दुख वरे सीस भारत पर गढे।।[18]

दादाभाई नौरोजी और रमेश चन्द्र मजुमदार जैसे स्वतंत्रता सेनानी आर्थिक-निष्कासन सिद्धांत में भारत की दासता का कारण खोज रहे थे,क्योंकि भारतीयों का आर्थिक शोषण उस काल की एक प्रमुख समस्या थी। बालकृष्ण भट्ट के शब्दों में[19] 'देश का धन विलायत ढोया चला जा रहा है, कितना भारी पाप हम कर रहे हैं तथा हजारों लाखों विलायती साहब लोग जो थोड़ा ही परिश्रम कर अलपायाम् महत् फलम् की भाँति लम्बी लम्बी तनख्वाहें फटकार असंख्य रुपया जमाकर विलायत में इंडियन जाय नवाब बनते हैं।' हरिशचन्द्र[20] की इन पंक्तियों में भी भारतीयों के आर्थिक शोषण का चित्रणद्रष्टव्य है -

इत की रूई सींगअरू चरमहि तित लौ जाय।
ताहि स्वच्छ करि वस्तु वहु भेजत इतहि बनाम ।।
तिनही को हम पाय कै. साजत निज आमोद।
तिन बिन छिन तृन सकल सुख स्वाद, विनोद प्रमोद ।।

भारतीयों का एक तरफ टैक्स व कर के बोझ से दबाया जा रहा था वहीं दूसरी ओर यहां का धन विलायत में भेजा जा रहा था।दादाभाई नौरोजी के धन-निष्कासन सिद्धांत के अनुसार भारत की ही वस्तुओं को निर्यात कर फिर पुन: भारत में अधिक दाम में बेचकर यहाँ की जनता का आर्थिक शोषण किया जा रहा था। इस प्रकार भारतेन्दु युग में जब देश इन सब समस्याओं से जूझ रहा था तब कवियों ने न केवल अतीत का गुणगान किया बल्कि वर्तमान दुरावस्था का चित्रण करते हुए उसका सामना करने के लिए जनता को कमर बांध कर शस्त्र धारण करते हुए आगे पांव बढ़ाने का सन्देश भी इस युग के कवियों ने दिया है। भारतेन्दु[21] ने स्वयं होली गाते हुए यह आह्वान किया है -

उठौ उठौ सब कमरन बाँधौ शस्त्रन सान धरो री।
विजय-निसान बजाइ बावरे आगेइ पाँव धरो री।।

तथा भारत पुत्रों को जगाने के लिए वे राम, युधिष्ठिर, और विक्रम की याद भी दिलाते-

उठी उठौ भैया क्यौ हारौ अपुन रूप सुमिरो री।
राम युधिष्ठिर विक्रम की तुम सटपट सुरत करोरी।।[22]

प्रताप नारायण मिश्र ने भी 'सब तजि गहनों स्वतंत्रता नहिं चुप लातै खाव' के द्वारा मूलत: अंग्रेजों के अत्याचार को ही दर्शाया है। प्राय: भारतेन्दु युग के कवियों ने इसी प्रकार के चित्र प्रस्तुत कर देश की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए भारतवासियों को प्रेरणा दी है। आचार्य शुक्ल ने इस युग की राष्ट्रीय काव्यधारा के विषय में लिखा है,[23] 'नवीनधारा' के बीच भारतेन्दु की वाणी का सबसे ऊँचा स्वर देश भक्ति का था। नील देवी, 'भारत दुर्दशा' आदि नाटकों के बीच आई हुई कविताओं में देश दशा की जो मार्मिक व्यंजना है, वह तो है ही, बहुत सी स्वतंत्र कविताएँ भी लिखी, जिनमें कहीं देश की अतीत गौरव गाथा का गर्व, कहीं वर्तमान अधोगति की क्षोम भरी वेदना, कहीं भविष्य की भावना से जागी हुई चिन्ता आदि अनेक पुनीत भावों का संचार पाया जाता है।' इस युग की राष्ट्रीयता के बारे में शिवदान सिंह चौहान[24] का मानना है कि 'हिन्दी की राष्ट्रीय आधुनिक कविता राष्ट्रीयता के क्रोड में पनपी है किन्तु उसके पोषण में भारतेन्दु युगीन रचनाकारों का सहयोग अधिक महत्वपूर्ण नहीं था।भारतेन्दु युग में राज्योन्मुख राष्ट्रीयता का स्वर न केवल साहित्य में, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलनों में भी दिखाई देता है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने साहित्य को सामाजिक परिवर्तन और राष्ट्रनिर्माण का माध्यम बनाया, जिससे आगे चलकर हिंदी क्षेत्र में राजनीतिक चेतना का विकास हुआ।'

यद्यपि इस युग के कवियों ने राजपरक कविताएं अधिक संख्या में लिखी है किन्तु इन कवियों में राष्ट्रीयता का अभाव नहीं था। सारांश रूप से कहे तो भारतेन्दुयुगीन कविताओं के युग ने राष्ट्रीय आन्दोलन व सामाजिक जागरण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। समय की मांग व परिस्थितिवश कवियों ने अपना रूख उस दिशा में भी मोड़ दिया था किन्तु सही अर्थों में देखें तो राष्ट्रीयता का बीजवपन भारतेन्दु युगीन रचनाओं से ही हुआ।भारतेन्दु का काव्य विदेशी शासन को समूल उखाड़ फेंकने के लिए उसकी आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक नीतियों पर प्रहार करता हुआ नवजागरण का संदेश देता है तथा देश की सोई हुई जनता को जगाने का प्रयत्न करता है।भारतेन्दु युग केवल हिन्दी साहित्य का नवजागरण काल ही नहीं, बल्कि आधुनिक भारत में राज्योन्मुख राष्ट्रीयता के बीज बोने वाला युग भी है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को एक सशक्त राजनीतिक उपकरण के रूप में प्रयोग किया, जिससे स्वतंत्रता संग्राम की नींव तैयार हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिवदान सिंह चौहान, 'हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष', पृष्ठ संख्या 29 राजकमल प्रकाशन,1979
2. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, 'भारतेन्दु हरिशचन्द्र', पृष्ठ संख्या 48, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद,1953
3. ओम प्रकाश सिंह (सं.), 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली', भाग 1. भूमिका से
4. ब्रजरत्नदास (सं.), भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग-2, पृष्ठ संख्या 624,697,629, 283, 291, 302
5. बिन्दू दुबे, 'दिनकर के काव्य का अनुशीलन', पृष्ठ संख्या 49
6. शिवकुमार शर्मा, 'हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ', पृष्ठ संख्या 474
7. ओमप्रकाश सिंह (सं.). भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग-1, पृष्ठ संख्या 132,140
8. ओम प्रकाश सिंह (सं.), भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग-1, पृष्ठ संख्या 113
9. ब्रजरत्नदास, भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग-2, पृष्ठ संख्या 503
10. उर्मिला जैन, 'आधुनिक हिन्दी काव्य में क्रान्ति की विचारधाराएं', पृष्ठ संख्या 103
11. रामरजन पाण्डेय, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ संख्या 282
12. उर्मिला जैन, 'आधुनिक हिन्दी काव्य में क्रान्ति की विचारधाराएँ', पृष्ठ संख्या 103
13. कृष्णवीर सिंह (सं.), 'भारतेन्दु हरिशचन्द्र रचित भारत दुर्दशा', पृष्ठ संख्या 42
14. वही, पृष्ठ संख्या 42
15. उर्मिला जैन, 'हिन्दी काव्य में क्रान्ति की विचारधाराएँ', पृष्ठ संख्या 104

16. रामरजन पाण्डेय,'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ संख्या 282,
17. नगेन्द्र, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ संख्या 452
18. बिन्दू दुबे, 'दिनकर के काव्य का अनुशीलन', पृष्ठ संख्या 51
19. रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ संख्या 448
20. रेणुवर्मा, साहित्यिक निबन्ध, पृष्ठ संख्या 115, 116
21. ब्रजरत्नदास (सं.), 'भारतेन्दु ग्रंथावली', भाग–2, पृष्ठ संख्या 736
22. हेमन्त शर्मा (सं.), 'भारतेन्दु समग्र', पृष्ठ संख्या 473, 473
23. रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ संख्या 542
24. शिवदान सिंह चौहान, 'हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष', पृष्ठ संख्या 24
25. मिश्र, रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
26. उपाध्याय, हजारीप्रसाद द्विवेदी, भारतेन्दु युग, राजकमल प्रकाशन।
27. गोस्वामी, शिवप्रसाद, भारतेन्दु हरिश्चंद्ररू व्यक्तित्व और कृतित्व, साहित्य भवन।
28. जैन, रामकुमार, भारतेन्दु और नवजागरण, ग्रंथ शिल्पी।
29. पांडेय, रामविलास शर्मा, भारतेन्दु युग और भारतीय नवजागरण, लोकभारती प्रकाशन।

****